पूर्ण पुरुष की तलाश का त्रासदी-आधे अधूरे

* डॉ. सुनीता वर्मा

मोहन राकेश स्वातंत्र्योत्तर युग के नाटककारों में श्रेष्ठ ध्यान रखते हैं। उन्होने तीन नाटक लिखे, "लहरों के राजहंस", "आषाढ़ का एक दिन" एवं "आधे–अधूरे"। प्रथम दो नाटक ऐतिहासिक पृष्टभूमि पर आधारित हैं। "आधे–अधूरे" पारिवारिक विघटन को चित्रित करने वाला सामाजिक नाटक है। परन्तु इन तीनों नाटकों में लेखक ने व्यक्ति के आंतरिक द्वंद को पकड़ने की चेष्टा की है, जो हिन्दी नाट्य साहित्य को मोहनराकेश की नई देन है।मोहन राकेश अपने प्रत्येक नाटकों में नये विषय, नयी संवेदना एवं नये भावबोधों को लेकर आते हैं। उनके नाटकों में विषय में विविधता के साथ चिंतन की गहराई मिलती है। नाटककार अपने नाटकों में स्त्री–पुरूष संबंधों को अलग–अलग दृष्टिकोण से देखने का प्रयास करते हैं। उनके नाटकों का हिन्दी ही नहीं अपितु, अन्य भाषाओं में अनुवाद एवं अनेक प्रदेशों में मंचन हुआ है जो उनके नाटकों की श्रेष्ठता को प्रमाणित करते हैं। ✧ विभागाध्यक्ष हिन्दी, स्वामी स्वरूपानंद इन्स्ट्टीट्यूट आफ एजुकेशन हुडको, भिलाई "आधे–अधूरे" हिन्दी का पहला नाटक है जो विवाह को चिरस्थायी व्यवस्था एवं घर को सुखी परिवार के रूप में स्थापित करने वाली सभी मान्यताओं को तोड़ता है। व्यक्ति, परिवार, समाज और उसके आपसी संबंधों में आये लगातार परिवर्तन की गंभीर मनोवैज्ञानिक एवं समाजशास्त्रीय अध्ययन है। मानव मूल्यों में पतन पारिवारिक विद्यटन एवं सर्वग्राही महत्वकांक्षा, सब कुछ पाने की चाहत की अंधी दौड़ ने अनेक आर्थिक एवं सामाजिक विकृतियों को जन्म दिया है। इन्हीं विकृतियों की दंश को पकड़ने की चेष्टा "आधे–अधूरे" नाटक में की गई है। मनुष्य अपने जीवन में अनंत इच्छाएँ रखता है व उसे पाने की मृगतृष्णा में भटकता रहता है। पर उसे पूरापन, मानवीयसंतोष कहीं नही मिलता। उसकी तलाश अधूरी रह जाती है। इस नाटक में स्त्री–पुरूष के लगाव व तनाव की कहानी को सच्चाई के साथ कही गई है।

"........ मैं अपने ही संबंध में निश्चित रूप से कुछ भी नहीं कह सकता– उसी तरह– जैसे इस नाटक के संबंध में नहीं कह सकता।"1 "आधे–अधूरे" का कथानक नाटक की नायिका सावित्री के पूर्ण पुरूष की तलाश को रेखांकित करती है। सावित्री महेन्द्रनाथ को पति के रूप में वरण तो कर लेती है। पर उसके साथ संतुष्ट नहीं रह पाती। कारण सावित्री ने महेन्द्रनाथ को जितना निकट से जाना है। वह उसे अधूरा सा आदमी लगने लगा है। वह महेन्द्रनाथ को फिजूल का आदमी समझती है, जो बेकार है, निठ्ल्ला बैठा रहता है। अतः सावित्री अपने निकम्मे व अस्तित्वहीन पति व घर की टूटती बिखरती जिन्दगी से ऊबकर पूर्ण आदमी की तलाश करती है। ओर इस तलाश में उसके सामने सबसे पहला व्यक्ति आता है – महेन्द्रनाथ का मित्र जुनैजा – जुनैजा पैसेवाला प्रतिष्ठित व्यक्ति है। परन्तु जुनेजा की ओर से कोई मार्ग न मिलने पर सावित्री शिवजीत की ओर आकर्षित होती है। शिवजीत के पास "एक बड़ी डिग्री, बड़े–बड़े शब्द और पूरी दुनिया घूमने की अनुभव हैं। पर असल चीज वही कि वह जो भी था और ही कुछ था – महेन्द्र नहीं था।"2 पर सावित्री ने जल्द ही उसे पहचानना शुरू कर दिया कि "वह निहायत ही दोगला किस्म का आदमी है। हमेशा दो तरह की बातें करता है। उसके बाद सामने आया जगमोहन। ऊँचे संबंध, जबान की मिठास, टिपटाप रहने की आदत और खर्च की दरियादिली परन्तु सावित्री को जगमोहन से भी शिकायत थी कि वह सब लोगों पर एक सा पैसा क्यों उड़ाता है। दूसरों की सख्त से सख्त बात को भी एक खामोश मुस्कुराहट के साथ क्यों पी जाता है।"3 सावित्री व जगमोहन का संबंध कोई दूसरा रूप लेता उससे पहले ही जगमोहन का तबादला हो गया और वह दूसरे स्थान चला गया। सावित्री मनोज को अपनाने की अंतिम चेष्टा करती है किन्तु मनोज चालीस वर्षीया सावित्री की जगह उसकी बेटी की ओर आकर्षित होता है व बिन्नी से विवाह कर लेता है। मनोज के इस व्यवहार से सावित्री अत्यंत संत्रस्त और आतंकित हो उठती है। परन्तु सावित्री पुनः बेटे अशोक को नौकरी दिलाने के लिए अपने बांस संधानिया से सम्पर्क बनाती है परन्तु सिंधानिया के द्वारा सावित्री को आगे का कोई मार्ग नहीं मिलता तभी उसे पता चलता है कि जगमोहन फिर लौट आया है। आगे का रास्ता बंद पाकर वह पुनः जगमोहन की ओर लौटने की अंतिम प्रयास करती है। वह जगमोहन का सहारा पाने के लिए उसकी बेरूखी के विरूद्ध अपने विगत प्रणय संबंधों की उष्मा उड़ेलने की चेष्टा करती है परन्तु वह व्यर्थ होकर रह जाती है। क्योंकि जो जगमोहन किसी समय सावित्री को लेकर जीवन शुरू करने के लिए लालायित था अब वह सावित्री की ढ़लती उमर, सामाजिक प्रतिष्ठा, मान सम्मान, बाल बच्चों के भविष्य को देखकर अत्यंत स्वाभाविक ढ़ंग से सावित्री को अपनाने से इंकार कर देता है। जगमोहन के साथ जाते समय सावित्री पूरे जीवन की कल्पना व उमंग लेकर जाती है। परन्तु लौटती है तो जगमोहन द्वारा

*विभागाध्यक्ष हिन्दी, स्वामी स्वरूपानंद इन्स्ट्टीट्यूट ऑफ एजुकेशन, हुडको, भिलाई

ठुकराये जाने की हताशा लेकर। जगमोहन व सावित्री का जो संबंध या आकर्षण मात्र शरीर का था वह आत्मा का कैसे हो सकता है। अतः न चाहते हुए भी सावित्री महेन्द्रनाथ के पास लौटने को मजबूर हो जाती है।

सावित्री की घुटन, पराजय व हताशा का सबसे बड़ा कारण यह है कि वह बहुत कुछ एक साथ ओढ़कर, कितना कुछ एक साथ पाकर जीना चाहती है। कहाँ जाय तो अधूरापन महेन्द्रनाथ में नहीं स्वंय सावित्री में हैं, जो उसे कहीं चैन से बैठने नहीं देती। जुनेजा, सावित्री के बारे में एक सीमा तक ठीक ही कहता है – "असल बात इतनी है कि महेन्द्र की जगह उसमें से कोई भी आदमी होता तुम्हारी जिन्दगी में तो साल दो साल बाद तुम यही महसूस करती कि तुमने एक गलत आदमी से शादी कर ली है। उसकी जिन्दगी में भी ऐसे ही कोई महेन्द्र, कोई जुनेजा, कोई शिवजीत या कोई जगमोहन होता जिसकी वजह से तुम यही सब सोचती, यही सब महसूस करती। क्योंकि तुम्हारे लिये जीने का मतलब रहा है कितना कुछ एक साथ होकर कितना कुछ एक साथ पाकर और कितना कुछ एक साथ ओढ़कर जीना। वह उतना कुछ कमी तुम्हें किसी एक जगह नहीं मिल पाता, इसलिए जिस किसी के साथ भी जिन्दगी शुरू करती तुम हमेशा इतनी ही खाली, इतनी ही बेचैन बनी रहती।"4 सावित्री पूर्ण आदमी की खोज में अन्त तक भटकती रही है और अलग–अलग अधूरे आदमी से टकराती है। पूरापर उसे शिवजीत, जगमोहन, मनोज व जुनेजा किसी में भी नहीं मिलता और अन्त में सावित्री जीवन के कडवे सच को पा लेती है कि कोई आदमी अपने आप में पूर्ण नहीं होता, बल्कि उसे लगता है ऊपरी चमक दमक में अन्तर होते हुए भी सभी व्यक्ति अंद से एक समान है – आधे अधूरे। "सब के सब ..... सब के सब" एक से। ...... बिलकुल एक से है आप लोग। अलग अलग मुखौटे पर चेहरा? चेहरा सबका एक ही।"5 सावित्री नाटक के अंत तक यह सोचती है कि वह महेन्द्रनाथ से छुटकारा पाकर पूर्णता प्राप्त करने को कोई जरिया ढूँढ़ सकती है परन्तु महेन्द्रनाथ वापस लौट आता है और अंत में सावित्री को बुझते प्रकाश तथा अंधेरे में उसी घर की कुर्सी का हत्था थामकर बैठ जाना पड़ता है जिस घर को छोड़ने का प्रयत्न उसने अनेक बार किया था। उसी घर में अपने अधूरे व अस्तित्वहीन पति के साथ रहने के लिए मजबूर होती है। यह जानते हुए भी कि "मुझे भी अपने पास इस मोहरे की बिल्कुल–बिल्कुल जरूरत नहीं है जो न खुद चलता है, न किसी और को चलने देता है।"6

'आधे–अधूरे' के कथानक में समसामयिक युग में व्याप्त स्त्री–पुरूष के संबंधों, मध्यमवर्ग में व्याप्त विघटन, पारिवारिक बिखराव, मानसिक तनाव और नैतिक विघटन का सशक्त चित्रण किया गया है। 'आधे–अधूरे' नाटक नायिका सावित्री के पूर्ण पुरूष के तलाश की कहानी है सावित्री नहीं समझ पाती कि कोई भी व्यक्ति पूर्ण नहीं होता आपसी प्रेम संबंध व भावनाओं की तीव्रता ही उसे पूर्ण बनाती है। सावित्री अपनी कल्पना में निहित पूर्ण पुरूष चाहती है। दूसरे के अधूरेपन व खालीपन को भरने का प्रयास नहीं करती अतः सावित्री की इच्छायें व आकांक्षायें अपूर्ण रह जाती हैं। सावित्री का यह अधूरापन उसके व्यक्तित्व व परिस्थितियों के कारण है। क्योंकि वह पूर्णता की तलाश अपने अंदर न करके अन्य व्यक्ति में करती है। परिणामतः उसका व्यक्तित्व खंडित होकर रह जाता है। सुनहरे भविष्य की आकांक्षा उसके लिए मृगतृष्णा सावित होती है। उसका चारित्रिक पतन तो होना ही है। परिवार में विघटन की स्थिति उत्पन्न हो जाती है सावित्री का चरित्र आज के निम्न मध्यमवर्गीय परिवार के तनाव, घूटन, विवशता और विफलता की कहानी है। कुल मिलाकर 'आधे–अधूरे' उत्कृष्ट मनोवैज्ञानिक नाटक बन गया है। नाटकार बताना चाहता है कि हमारी अतृप्त इच्छायें पूरेपन की आकांक्षा हमें भयंकर विनाश की ओर ले जाती है। पूर्णता की तलाश व्यर्थ है। पूर्ण न मनुष्य है न सृष्टि है, न ईश्वर। इसलिए शिव को अर्धनारिश्वर कहा जाता है क्योंकि स्त्री के बिना वह भी अपूर्ण है। लेखक ने सावित्री के माध्यम से आधुनिक युग की नारी की छटपटाहट एवं तृष्णा को अभिव्यक्त किया है। नाटक की काल्पनिक कथावस्तु की समस्या पश्चिम समाज से जुड़ी है परन्तु हमारे समय में महेन्द्रनाथ एवं सावित्री जैसे अनेक पात्र हैं जो जीवन में प्राप्त असफलता से निराश है। हमारे समाज में जगमोहन जैसे लम्पट और सिंघानिया जैसे भ्रष्ट अधिकारी है जो अपने पद एवं रूतबे का प्रयोग सावित्री जैसी स्त्रियों को आकृष्ट करने के लिए करते हैं। 'नाटक' में अशोक और बिन्नी जैसे नये पीढ़ी का दिग्दर्शन कराया गया है। वह प्रमाणिक व प्रभावशाली है। नाबालिक बालाओं की स्ची पुरूष संबंधों के प्रति उत्सुकता खतरे की घंटी है। जिसका चित्रण नाटककार ने 'आधे–अधूरे' में कर समाज को आने वाले खतरे के प्रति आगाह किया है। सामाजिक जीवन में जब तक समझौता नहीं होगा एक दूसरे के खालीपन को भरने का प्रयास नहीं होगा तब तक परिवार में विघटन होता रहेगा और सावित्री जैसी नारियॉ पूर्ण पुरूष की तलाश में अपने परिवार को विघटन के कगार पर खड़ी करती रहेगी।

संदर्भ ग्रंथ

1. मोहन राकेश 'आधे–अधूरे' (2004), पृ. 27 2. मोहन राकेश 'आधे–अधूरे' (2004), पृ. 114 3. मोहन राकेश 'आधे–अधूरे' (2004), पृ. 114 4. मोहन राकेश 'आधे–अधूरे' (2004), पृ. 114 5. मोहन राकेश 'आधे–अधूरे' (2004), पृ. 117 6. मोहन राकेश 'आधे–अधूरे' (2004), पृ. 118 7. किशोर ब्रजराज – हिन्दी नाटक और रंगमंच, समकालिन परिदृश्य– (प्रथम संस्करण, 1988) जनप्रिय प्रकाशन 8. डॉ. नगेन्द्र–(1973) हिन्दी साहित्य का इतिहास, प्रथम संस्करण मयूर पेपर बैक्स 9. रस्तोगी डॉ. गिरीश– मोहन राकेश और उनके नाटक 10. डॉ. रीताकुमार स्वतंत्रतायोत्तर हिन्दी नाटक – मोहन राकेश के विशेष संदर्भ में।